संगति
भाग – २

बिजली की शक्ति को महसूस करना — वस्तुओं की **ग्रहण शक्ति** (conductivity) पर निर्भर करता है। यह ग्रहण शक्ति (receptivity) अलग-अलग वस्तुओं की बनावट तथा **सूक्ष्मता** (sensitivity) अनुसार होती है।

'लकड़ी' या 'रबड़' में ग्रहण शक्ति बहुत कम या **नाममात्र** होती है (bad-conductivity) ।

कई वस्तुओं में **मध्यम** कोटि की ग्रहण शक्ति (medium conductivity) होती है।

कई वस्तुओं में यह ग्रहण शक्ति अति **तीव्र** (high conductivity) होती है।

इसी प्रकार प्रत्येक 'जीव' के अन्दर **'आत्मिक बिजली' अथवा 'शबद' रवि रहिआ परिपूर्ण** है — परन्तु हमारा मन मायिकी रंग के प्रभाव मे इतना **'कठोर'** हो चुका है कि अपने अन्दर 'रवि रही परिपूर्ण' आत्मिक बिजली अथवा **'जीवन-रौं' या 'शबद' को** —

महसूस करने
जानने
बूझने
अनुभव करने
ग्रहण करने
'संग' करने
प्रभाव लेने
सांझ करने
आदान-प्रदान करने
लाभ लेने
आनन्द लेने

से असमर्थ है।

इसका अर्थ यह है, कि हम अपनी मानसिक —

भूल

भ्रम

अज्ञानता

मनमुखता

के कारण, अन्तर -आत्मिक **ईश्वरीय 'ज्योति' 'शबद', 'नाम' के दिन रात** —

साथ होते हुए

मेल -मिलाप करते हुए

जीवन आधार होते हुए

रवि रहिआ परिपूर्ण होते हुए

भी, उससे —

संग

संगति

सांझ

मेल -मिलाप

आदान -प्रदान

वाणिज्य -व्यापार

नहीं कर सकते, जिस कारण ईश्वरीय गुणों से हम **वंचित रहते हैं तथा अपनी आत्मिक 'विरासत' का लाभ नहीं उठाते ।**

परतखि पिरु घरि नालि पिआरा विछुड़ि चोटा खाइ ॥ (पृ. २३४)

संगि होवत कउ जानत दूरि

सो जनु मरता नित नित झूरि ॥ (पृ. ३९५)

सेजै रमतु नैन नही पेखउ इहु दुखु का सउ कहउ रे ॥ (पृ. ४८२)

धन पिर एकै संगि बसेरा ॥

सेज एक पै मिलनु दुहेरा ॥ (पृ. ४८३)

इआनड़ीए मानड़ा काइ करेहि ॥

आपनड़ै घरि हरि रंगो की न माणेहि ॥ (पृ. ७२२)

धन पिर का इक ही सगि वासा
विचि हउमै भीति करारी ॥ (पृ. १२६३)

जीव की दोनों **अवस्थाओं** अथवा —

भूल	या	याद
कुसंगति	या	संगति
मनमुखता	या	गुरमुखता
दुख	या	सुख
नरक	या	स्वर्ग

के बीच महत्त्वपूर्ण नुक्ता (crucial point) हमारी चेतनता (consciousness) ही है ।

यदि हमारी **चेतनता** मायिकी संगत अथवा 'भ्रम' में रहती है, तो हम **'मनमुख'** हो जाते हैं तथा ईश्वरीय मंडल को **'भूल'** जाते हैं — परन्तु, यदि हमारी 'चेतनता' **आत्मिक संगति करती है,** तब हमारे अन्दर **दैवीय चेतनता** (Divine consciousness) **दृढ़ होती जाती है ।**

साध संगति द्वारा प्राप्त हुई **दैवीय चेतनता** अथवा **'विवेक बुद्धि'** ने ही मानसिक या आत्मिक 'जीवन' अथवा 'अच्छी' या 'बुरी' संगति का —

निर्णय करना है ।
जीवन सीध देनी है ।
चिन्तन करना है ।
अभ्यास करना है ।
कर्म करना है ।

साध संगति मिलि बुधि बिबेक ॥ (पृ. ३७७)

सतसंगति मिलि बिबेक बुधि होई ॥
पारसु परसि लोहा कंचनु सोई ॥ (पृ. ४८१)

साध सगि नानक बुधि पाई हरि कीरतनु आधारो ॥ (पृ. ४९८)

दुरमति मैलु गई सभ नीकलि
सत संगति मिलि बुधि पाई ॥ (पृ. ८८१)

भगत दइआ ते बुधि परगासै दुरमति दूख तजावना ।। (पृ. १०१८)

सुधि बुधि सुरति नामि हरि पाईऐ
सत संगति गुर पिआर ।। (पृ. १२५६)

अन्तर-आत्मा में — 'ज्योति' अथवा 'शबद' की चेतनता द्वारा प्राप्त किये हुए **ज्ञान** (spiritual knowledge) को **अनुभव** (intuition) कहा गया है ।

अनुभव हमें अनन्त आत्मिक मंडल की सूझ तथा ज्ञान प्रदान करता है ।

दिमागी ज्ञान हमें मायिकी मंडल की ही सूझ या ज्ञान दे सकता है ।

इन दोनों प्रकार के ज्ञान —

अनुभवी आत्मिक ज्ञान
दिमागी मायिकी ज्ञान

के बीच 'चेतनता' की डोर है ।

यदि हमारी चेतनता की डोर या **'ध्यान'** दैवीय संगति से जुड़ा हो अथवा **'आत्म-परायण'** हो, तब उसे **'सत संगति'** कहा जाता है तथा हमारी चेतनता को 'दैवीय रंगत' चढ़ती जाती है तथा हम **'साध-संत-भक्त-गुरमुख' बन सकते हैं ।**

दूसरी ओर यदि हमारी चेतनता की डोर या **'ध्यान'** मायिकी भ्रम में खचित हो, तब उसे **'कुसंगति' अथवा तुच्छ संगति कहा जाता है — जिस से हम मनमुख-मायाधारी-साकत बन जाते हैं,** तथा आत्मिक मंडल से **टूट जाते हैं ।**

इन दोनों अवस्थाओं में जीव की —

चेतनता अथवा **'ध्यान'**

तथा

'संग करना' अथवा **'संगति करने'**

का ही परस्पर प्रभाव तथा प्रवृति है ।

प्रत्येक 'कर्म' (action) **की पूर्ण सफलता के लिए 'चेतनता' अथवा 'ध्यान'** (attention) **अनिवार्य है ।**

इकु मनु इकु वरतदा जितु लगै सो थाइ पाइ ।। (पृः ३०३)

इसी प्रकार **'संग' या 'संगति' करने के पूर्ण लाभ तथा परस्पर 'सांझ' अथवा आदान-प्रदान के लिए भी 'चेतनता' अथवा 'ध्यान' की अति आवश्यकता है ।**

'ध्यान' अथवा 'सुरति' बिना 'सांझ' या 'आदान-प्रदान' नहीं हो सकता ।

कुछ उदाहरणों द्वारा इस तथ्य को प्रमाणित किया जाता है —

घर में रेडियों (radio) **या टेप रिकार्डर** (tape recorder) **द्वारा कीर्तन या पाठ** हो रहा है, परन्तु घर के सदस्य अपने घरेलू मामलों में व्यस्त हैं या बातों में मस्त हैं । मुद्दा तो यह था कि लाउड स्पीकर (loud speaker) **या अन्य साधनों द्वारा पाठ** तथा कीर्तन ज्यादा से ज्यादा श्रोताओं तक, **घरों में भी** पहुँचाया जाए । परन्तु, हमारे मन का, **किसी अन्य विषय में लीन होने के कारण,** कीर्तन तथा गुरबाणी की ओर हमारा **'ध्यान' ही नहीं होता ।**

इसी प्रकार जब हम स्वयं पाठ या सिमरन करते हैं, तब हमारी **'चेतनता' अन्य अनेक के चिंतन में लगी होती है,** जिस कारण हमारा ध्यान गुरबाणी में नहीं लगता ।

साधारणतयः संगत की भी यही शिकायत है कि गुरबाणी तथा सिमरन में **मन नहीं टिकता ।**

जब हमारी **'चेतनता' या 'ध्यान' गुरबाणी अथवा सिमरन की ओर न हो,** तब हम गुरबाणी की **'संगति' नहीं कर रहे होते,** जिस कारण हमारा गुरबाणी के आन्तरिक आत्मिक भावों से **'संग' या 'मेल' नहीं होता** तथा गुरबाणी से हमारे मन की **सांझ या 'आदान-प्रदान' नहीं होता ।** इस प्रकार पावन-पवित्र ईश्वरीय गुरबाणी की **संगति नहीं होती तथा गुरबाणी की 'पारस-कला' से हम वचित रहते हैं ।**

दूसरे शबदों में **'चेतनता' या 'ध्यान' के बिना जो कुछ भी करते हैं सब 'बिना ध्यान' अथवा 'गैर हाज़री' में ही करते हैं ।** इस लिए हम 'साध संगति' या 'सत संगति' से **पूर्ण लाभ** नहीं लेते तथा गुरबाणी के पाठ, कीर्तन तथा सिमरन के लाभ से भी **वचित रहते हैं ।**

यही कारण है कि पुरातन समय की अपेक्षा आजकल बहुत अधिक —

धर्म

धर्म-ग्रन्थ

धर्म मन्दिर

धर्म प्रचार

सत्संग समागम

पाठ

पूजा

कीर्तन

जप

तप

कर्म-क्रिया

के बावजूद भी, हमारी मानसिक तथा आत्मिक अवस्था में परिवर्तन नहीं आता, बल्कि हमारी मानसिक दशा अथवा शख्सीयत गिरावट की ओर जा रही है ।

पडित पड़हि सादु न पावहि ।।
दूजै भाइ माइआ मनु भरमावहि ।। (पृ. ११६)

रहत अवर कछु अवर कमावत ।।
मनि नही प्रीति मुखहु गंढ लावत ।। (पृ. २६९)

तीरथि जाउ त हउ हउ करते ।।
पडित पूछउ त माइआ राते ।। (पृ. ३८५)

सासतु बेदु बकै खड़ो भाई करम करहु संसारी ।।
पाखडि मैलु न चूकई भाई अंतरि मैलु विकारी ।।
इन बिधि डूबी माकुरी भाई ऊँढी सिर कै भारी ।। (पृ. ६३५)

पूजा अरचा बंदन डंडउत खटु करमा रतु रहता ।।
हउ हउ करत बंधन महि परिआ नह मिलीऐ इह जुगता ।। (पृ. ६४२)

हिदै कपटु मुख गिआनी ।।
झूठे कहा बिलोवसि पानी ।। (पृ. ६५६)

अरवी त मीटहि नाक पकड़हि ठगण कउ संसारु ॥ (पृ ६६२)

भेरव दिरवावै सचु न कमावै ॥
कहतो महली निकटि न आवै ॥ (पृ ७३८)

'चेतनता' के बिना हमारा जीवन 'निर्जीव' पदार्थिक वस्तुओं (matter) **जैसा ही होता है।** इसलिए जीवों का परस्पर सूक्ष्म मानसिक तथा आत्मिक सतह पर मेल-मिलाप, 'संगति' 'सांझ' तथा 'आदान-प्रदान' नहीं हो सकता।

मनुष्य तथा जानवरों में इसी **'चेतनता' का ही 'अंतर' है।** मनुष्य में यह चेतनता (consciousness) अति तीक्ष्ण, तीव्र तथा **सूक्ष्म भावनाओं** (subtle feelings) वाली होती है — जिस कारण यह संगति द्वारा उच्च-उत्तम आत्मिक प्रेम भावनाओं को **ग्रहण करके आनन्द ले सकते हैं** परन्तु जानवरों में यह **'चेतनता' मोटी-स्थूल होती है** जो सूक्ष्म आत्मिक भावनाओं को ग्रहण नहीं कर सकती।

हमारी **रुचि** (interest) अनुसार हमारे मन का ध्यान खिँचता है। कई जन्मों से हमारा मन ईश्वरीय मंडल से **'टूटा'** हुआ है तथा मायिकी मंडल में मस्त होकर **सूक्ष्म आत्मिक प्रेम भावनाओं को ग्रहण करने से असमर्थ हो चुका है।**

दूसरे शब्दों में हमारी चेतनता अथवा मानसिक अवस्था जानवरों जैसी हो चुकी है।

जो न सुनहि जसु परमानंदा ॥
पसु पंरवी त्रिगद जोनि ते मंदा ॥ (पृ १८८)

करतूति पसू की मानस जाति ॥
लोक पचारा करै दिनु राति ॥ (पृ २६७)

बिनु संगती सभि ऐसे रहहि जैसे पसु ढोर ॥ (पृ ४२७)

जिहवा इंद्री सादि लुोभाना ॥
पसू भए नही मिटै नीसाना ॥ (पृ ९०३)

किरतु न मिटई हुकमु न बूझै पसूआ माहि समाना ॥ (पृ १०१३)

साध-संगति कबहू नही कीनी रचिओ धंधै झूठ ॥
सुआन सूकर बाइस जिवै भटकतु चालिओ ऊठि ॥ (पृ ११०५)

पसूआ करम करै नही बूझै कूडु कमावै कूडो होइ ।। (पृ. ११३२)

मनमुखि अंधुले गुरमति न भाई ।।
पसू भए अभिमानु न जाई ।। (पृ. ११९०)

मनमुख विणु नावै कूड़िआर फिरहि बेतालिआ ।।
पसू माणस चमि पलेटे अंदरहु कालिआ ।। (पृ. १२८४)

हमारी **'पशु -वृत्ति' या 'तुच्छ चेतनता' को 'बदलने' अथवा उच्च - उत्तम तथा 'आत्म परायण' करने के लिए,** गुरबाणी में एक मात्र **'साधन' अथवा युक्ति** दर्शायी गयी है, वह है —

'साध संगत' अथवा 'सत संगत' ।

जो जो जपै तिस की गति होइ ।।
साध-संगि पावै जनु कोइ ।।
करि किरपा अंतरि उर धारै ।।
पसु प्रेत मुघद पाथर कउ तारै ।। (पृ. २७४)

ऊठत बैठत हरि भजहु साधू संगि परीति ।।
नानक दुरमति छुटि गई पारब्रहम बसे चीति ।। (पृ. २९७)

सुभ चिंतन गोबिंद रमण निरमल साधू संग ।। (पृ. ५२२)

आन उपाउ न कोऊ सूझै हरि दासा सरणी परि रहा ।। (पृ. १२०३)

गुरमुखि सुख फल साध संगु
पसु परेत पतित निसतारे । (वा. भा. गु. १६/७)

किसी ख्याल को एक नुक्ते पर एकाग्र करने को **'ध्यान' अथवा 'सुरति - वृत्ति' कहा जाता है ।**

जीवन के प्रत्येक कार्य की सफलता तथा सम्पूर्णता के लिए **'ध्यान' अनिवार्य है । 'ध्यान' के बिना** कोई कार्य —

सही
मुकम्मल
पूर्ण
लाभदायक

नहीं हो सकता ।

इसी प्रकार **ध्यान के बिना** धार्मिक पाठ -पूजा तथा कर्म क्रिया भी —

फोकट

रसहीन

भावनाहीन

लाभ हीन

मुर्दा साधन

ही बन कर रह जाते हैं ।

'सुलतानपुर' में गुरू नानक साहिब का काजियों की **'बिना ध्यान' नमाज** में सम्मलित न होना भी, इसी बात का प्रतीक है कि **ध्यान के बिना** पाठ, पूजा जाप, सिमरन तथा कर्म -क्रिया **निष्फल हैं।** परन्तु फिर भी आम जनता —

बिना -ध्यान

औपचारिक तौर पर

नकल करके

देखा -देखी

लोकाचार

दिखलावे मात्र

स्वार्थ के लिए

मन की सन्तुष्टि के लिए

माया एकत्र करने के लिए

ही पाठ, पूजा, कीर्तन, कर्म -क्रिया तथा धर्म -प्रचार आदि **करते जा रहे हैं।**

जिन कउ प्रीति रिदै हरि नाही तिन कूरे गाढन गाढे ॥ (पृ. १७१)

धोहु न चली खसम नालि लबि मोहि विगुते ॥
करतब करनि भलेरिआ मदि माइआ सुते ॥ (पृ. ३२१)

जो दूजै भाइ साकत कामना अरथि दुरगंध सरेवदे
सो निहफल सभु अगिआनु ॥ (पृ. ७३४)

इकि अपणै सुआइ आइ बहहि गुर आगै
जिउ बगुल समाधि लगाईऐ ॥ (पृ. ८८१)

मूंडु मुडाइ जटा सिख बाधी मोनि रहै अभिमाना ।।
मनूआ डोलै दह दिस धावै बिनु रत आतम गिआना ।। (पृ १०१३)

किआ उजू पाकु कीआ मुहु धोइआ किआ मसीति सिरु लाइआ ।।
जउ दिल महि कपटु निवाज गुजारहु किआ हज काबै जाइआ ।।
(पृ १३५०)

मोह-माया में लीन हुआ मन या अन्तःकरण, अपने-आप जो भी कर्म, धर्म तथा पाठ-पूजा करता है, वे सब प्रायः **'अहम्' में 'बिना ध्यान', 'ऊपरी' मन से किये जाते हैं ।** इसी कारण ईश्वरीय मंडल की **सूक्ष्म आत्मिक प्रेम भावनाओं का हमारे मन पर प्रभाव नहीं पड़ता** तथा हमारे जीवन में कोई उत्तम-श्रेष्ठ **'परिवर्तन' नहीं आता ।**

जीवन में मानसिक तथा **आत्मिक परिर्वतन लाने के लिए,** गुरबाणी में यूँ **प्रेरणा** की गयी है —

मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ।। (पृ १२)

मिटि गए बैर भए सभ रेन ।।
अम्रित नामु साधसगि लैन ।। (पृ २९५)

साधू संगति दीओ रलाइ ।।
पंच दूत ते लीओ छडाइ ।। (पृ ३३१)

अगनि सागर भए सीतल साध अंचल गहि रहे ।। (पृ ४५८)

करि साधसंगति सिमरु माधो होहि पतित पुनीत ।। (पृ ६३१)

गई गिलानि साध कै सगि ।।
मनु तनु रातो हरि कै रगि ।। (पृ ८९२)

प्रभु आराधन निरमल रीति ।।
साधसगि बिनसी बिपरीति ।। (पृ ११३७)

इसके विपरीत, **'साध संगति' के बिना** जीव की दशा को गुरबाणी में यूँ दर्शाया गया है —

जो सतिगुर सरणि संगति नही आए ध्रिगु जीवे ध्रिगु जीवासि ।। (पृ १०)

साध संगति सिउ संगु न कीआ बहु जोनी दुखु पावै ।। (पृ ७७)

साध जना ते बाहरी से रहनि इकेलड़ीआह ॥
तिन दुखु न कबहू उतरै से जम के वसि पड़ीआह ॥ (पृ. १३५)

डोलि डोलि महा दुखु पाइआ बिना साधू संग ॥ (पृ. ४०५)

जिन सतिगुर संगति संगु न पाइआ
से भागहीण पापी जमि खाइआ ॥ (पृ. ४९४)

टिकनु न पावै बिनु सतसंगति किसु आगै जाइ रूआईऐ ॥ (पृ. ५३२)

बिनु साधू जो जीवना तेतो बिरथारी ॥ (पृ. ८१०)

इसी लिए गुरबाणी में हमें 'साध संगति' के विषय में इस प्रकार **'याचना'** करने की प्रेरणा की गयी है —

हरि जीउ आगै करी अरदासि ॥
साधू जन संगति होइ निवासु ॥ (पृ. ४१५)

कहु नानक प्रभ बरवस करीजै ॥
करि किरपा मोहि साधसंगु दीजै ॥ (पृ. ७३८)

करि किरपा मोहि मारगि पावहु ॥
साधसंगति कै अंचलि लावहु ॥ (पृ. ८०१)

वडभागी हरि नामु धिआवहि हरि के भगत हरे ॥
तिन की संगति देहि प्रभ जाचउ मै मूड़ मुगध निसतरे ॥ (पृ. ९७५)

कोई आवै संतो हरि का जनु संतो मेरा प्रीतम जनु संतो
मोहि मारगु दिखलावै ॥ (पृ. १२०१)

ऐसी मांगु गोबिद ते ॥
टहल संतन की संगु साधू का हरि नामां जपि परम गते ॥
(पृ. १२९८)

टेलीफोन (telephone) पर बात करने अथवा मेल-मिलाप करने के लिए किसी विशेष नम्बर का **'मेल'** होना अनिवार्य है। यदि वह नम्बर **न मिले** या रिसीवर (receiver) न उठाया जाये, तब **दोनों पक्षों में** —

बात चीत नहीं होती
'सांझ' अथवा 'संगति' नहीं होती

आदान -प्रदान नहीं होता
वाणिज्य -व्यापार नहीं होता ।

ठीक इसी प्रकार यदि पाठ -पूजा, तथा भजन बन्दगी करते हुए **हमारा मन 'सावधान एकागर चीत' न हो,** तब गुरबाणी के आन्तरिक गहरे अति सूक्ष्म भावों से हम **वचित रहते हैं** तथा गुरबाणी की **'पारस कला' हम पर नहीं घटती ।** तभी गुरबाणी में प्रेरणा तथा ताकीद भरा हुकुम है —

इक मनि एकु धिआईऐ मन की लाहि भराति ॥ (पृ. ४७)

प्रभ की उसतति करहु संत मीत ॥
सावधान एकागर चीत ॥ (पृ. २९५)

ए मन हरि जी धिआइ तू इक मनि इक चिति भाइ ॥ (पृ. ६५३)

इक चिति इक मनि धिआइ सुआमी लाइ प्रीति पिआरो ॥ (पृ. ८४५)

मन बच करम अराधे करता तिसु नाही कदे सजाई हे ॥ (पृ. १०७१)

इक मन इकु अराधणा गुरमति आपु गवाइ सुहेले । (वा.भा.गु. ५/६)

कुरबाणी तिना गुर सिखा हुइ इक मन गुर जापु जपंदे । (वा.भा.गु. १२/२)

इस **'एकाग्रता'** के लिए मन की दशा के विषय में गुरबाणी में यूँ ताड़ना की गयी है —

इहु मनूआ खिनु न टिकै बहु रंगी
दह दह दिसि चलि चलि हाढे ॥ (पृ. १७१)

रहत अवर कछु अवर कमावत ॥
मनि नही प्रीति मुखहु गंढ लावत ॥ (पृ.२६९)

हमरै जीइ होरु मुखि होरु होत है हम करमहीण कूड़िआरी ॥ (पृ. ५२८)

वास्तव में इस विषय का सब से विशेष तथा असली दृष्टान्त हमारा अपना **मायिकी जीवन** ही है ।

जीव अहम् के भ्रम -भुलाव द्वारा अपने स्रोत अकाल पुरुष को **'भूल -कर'** अथवा **'बिछुड़ कर'** कई जन्मों से मोह -माया की दल -दल में धँसा हुआ है अथवा द्वैत भाव में लीन है ।

हरि साजनु पुरखु विसारि कै लगी माइआ धोहु ॥
पुत्र कलत्र न संगि धना हरि अविनासी ओहु ॥
पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ॥ (पृ. १३३)

माइआ मोहि नटि बाजी पाई ॥
मनमुख अंध रहे लपटाई ॥ (पृ. २३०)

इन पंचन मेरो मनु जु बिगारिओ ॥
पलु पलु हरि जी ते अंतरु पारिओ ॥ (पृ. ७१०)

अनिक जनम बीतीअन भरमाई ॥
घरि वासु न देवै दुतर माई ॥
दिनु रैनि अपना कीआ पाई ॥
किसु दोसु न दीजै किरतु भवाई ॥ (पृ. ७४५)

अनेक जन्मों से इस झूठी माया में हम इतने तल्लीन हुए बैठे हैं कि हमारा **'जीवन' माया का ही 'रूप' बन चुका है,** इस लिए हमारे —

ख्याल
कल्पना
सोच
दिलचस्पी
आशाएं
प्यार
भावना
निश्चय
श्रद्धा
संगति
आदान -प्रदान
कर्म
धर्म

क्रिया

साधना

अथवा **सम्पूर्ण जीवन को ही मोह-माया की 'गहरी रंगत' चढ़ी हुई है,** जिस कारण हमारी —

चेतनता

ध्यान

सुरति

वृत्ति

लिव

इसी झूठी माया में अचेत, सहज - स्वभाव, अनजाने ही ऐसी **समायी हुई** है कि इससे बाहर अन्य किसी ओर हमारा **'ध्यान' जाना असम्भव है।**

हमारे अन्दर इस झूठी माया की —

चेतनता

ख्याल

ध्यान

संग

विश्वास

वृत्ति

लिव

अनेक पूर्व जन्मों में माया की —

संगति करने

ख्याल करने

याद करने

सिमरन करने

अभ्यास करने

से उत्पन्न हुई तथा इतनी **दृढ़ हो गयी है,** कि 'मायिकी चेतनता' (materialistic consciousness) द्वारा **'माया' ही हमारा 'जीवन रूप' बन चुकी है** तथा इसी

मायिकी जीवन में ही हम —

जन्म लेते

जीवन जीते

विचरण करते

कर्म करते

परिणाम भोगते

मरते

यम के वश पड़ते तथा

फिर जन्म लेते हैं।

त्रउदसी तीनि ताप संसार ॥ आवत जात नरक अवतार ॥..............
हरख सोग का देह करि बाधिओ ॥
दीरघ रोगु माइआ आसाधिओ ॥ (पृ. २९९)

हरि बिसरिऐ किउ त्रिपतावै ना मनु रंजीऐ ॥
प्रभू छोडि अन लागै नरकि समंजीऐ ॥ (पृ ७०८)

जमि जमि मरै मरै फिरि जंमै ॥ बहुतु सजाइ पइआ देसि लमै ॥
जिनि कीता तिसै न जाणी अंधा ता दुखु सहै पराणीआ ॥ (पृ १०२०)

माइआ मोहि बहु भरमिआ ॥
किरत रेख करि करमिआ ॥ (पृ. ११९३)

यदि 'इन्सान' के जीवन को **'मायिकी रंग'** चढ़ाने अथवा दृढ़ करने के लिए अनगिनत जन्मों में माया के साथ **'संग'** अथवा मेल जोल के अभ्यास की आवश्यकता है, तब इसके ठीक विपरीत, **'मायिकी जीवन' को 'आत्मिक जीवन' में बदलने, ढालने अथवा दृढ़ कराने के लिए इससे अधिक समय के लिए उत्तम, पवित्र 'साध-संगति' अथवा 'सत संगति करनी अत्यन्त आवश्यक तथा अनिवार्य है ।**

यह **'उल्टी खेल' अथवा आत्मिक 'परिवर्तन'** अति लम्बी तथा कठिन 'प्रेम खेल' है, जो बख्शे हुए गुरमुख प्यारों, महापुरुषों की **लगातार 'संगति' तथा सेवा-भाव से 'सरल' तथा शीघ्र सम्भव हो सकती है ।**

इसी कारण गुरबाणी में 'साध संगति' अथवा 'सत संगति' करने की ताकीद भरी प्रेरणा की गयी है —

साधू संगति मनि वसै पूरन होवै घाल ॥ (पृ ५२)

सुणि साजन मेरे मीत पिआरे ॥
साधसंगि खिन माहि उधारे ॥ (पृ १०३)

करि करि हारिओ अनिक बहु भाती छोडहि कतहूं नाही ॥
एक बात सुनि ताकी ओटा साध संगि मिटि जाही ॥ (पृ २०६)

जीति जनमु इहु रतनु अमोलकु **साध संगति जपि इक खिना ॥**
(पृ २१०)

साध कै संगि नही कछु घाल ॥
दरसनु भेटत होत निहाल ॥ (पृ २७२)

महा पवित्र साध का संगु ॥
जिसु भेटत लागै प्रभ रंगु ॥ (पृ ३९२-३९३)

खिनहूं किरपा साधू संग नानक हरि रंगु लाइओ ॥ (पृ ४०९)

बनु बनु फिरती खोजती हारी बहु अवगाहि ॥
नानक भेटे साध जब हरि पाइआ मन माहि ॥ (पृ ४५५)

नानक पतित पवित मिलि संगति गुर सतिगुर पाछै छुकटी ॥ (पृ ५२८)

साधसंगि मिलि नामु धिआवहु पूरन होवै घाला ॥ (पृ ६१७)

साध संगति कै अंचलि लावहु बिखम नदी जाइ तरणी ॥ (पृ ७०२)

एक पलक सुख साध समागम कोटि बैकुंठह पांए ॥ (पृ १२०८)

सतसंगति सतिगुर चटसाल है जितु हरि गुण सिखा ॥ (पृ १३१६)

(क्रमशः ....)